।।ओइम्।।

मन सबल तो तन सबल

'मन' मानव शरीर का दर्पण है, जिसका प्रतिबिम्ब उसके व्यक्तित्व से स्पष्ट दिखाई देता है। मनुष्य का मुख्य अस्तित्व उसकी आन्तरिक, अलक्ष्य एवं आध्यात्मिक शक्तियाँ ही हैं, जिनके माध्यम से वह अपना जीवन और कर्मशक्ति स्वंय अंर्तमन से ही ग्रहण करता है। बाह्य वस्तुएँ तो एक प्रकार की सारणियाँ है, जिससे मानव–अस्तित्व की शक्तियाँ व्यय होती है, किन्तु इन शक्तियों को निरन्तर उर्जित करते रहने के लिये, 'मन' का सुदृढ़, सुविकसित और सकारात्मक होना अत्यन्त आवश्यक है। मूलतः जब मन की भावनाएँ शान्त रहती हैं तभी शरीर प्रसन्नचित्त रहता है और कर्मक्षेत्र की हर दिशा में आशातीत सफलताएँ अर्जित करता है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, सामान्यतयाः मानव धन, वैभव, आधुनिक सुख–सुविधाओं को पाने की महत्वाकांक्षाओं से त्रस्त हैं और भोग–विलास पूर्णतया ना मिलने पर स्वंय को हताशा व निराशा की स्थिति में आता है। वस्तुतः जीवन में सच्चा सुख–सम्पन्नता और सफलताएँ प्राप्त करने के लिये, धैर्य, परिश्रम व ज्ञान का परिमार्जन करके, अपनी मानसिक शक्तियों को 'आत्मबल' के माध्यम से संचित करना चाहिये क्योंकि 'निपुण–मन' से ही वह अपनी शारीरिक शक्तियों को सक्षम कर सकता है इसके लिये सांसारिक मोह को पृथक कर, क्षणिक सुखों में 'मन' को वश में रखकर, मौन रहने की क्षमता को

उत्सर्जित करना चाहिये, जो केवल प्राणायाम, योग और ध्यान के अविरल अभ्यास से ही सम्भव है।

वास्तव में, मौन में महान शक्ति है, क्योंकि यह आत्मसंयम का परिणाम है। मनुष्य अपने मन पर जितना नियन्त्रण कर लेता है, उसकी मानसिक शक्तियाँ इतनी ही उन्नत व विकसित होती है अर्थात् उच्चतर जीवन की प्राप्ति की दशा में, उत्कृष्ट कार्य करने हेतु 'मन' को मौन के द्वारा परिष्कृत करना चाहिये। मौन के रहते हुए, यदि व्यक्ति इन्द्रियों से आसक्त होता है तो आत्मा को पवित्र विचार नहीं मिलते अपतिु जीवन शनैः शनैः ह्रास की ओर अग्रसर हो जाता है। अतः जिस तरह शरीर को श्रम के पश्चात् पुनः शक्ति अर्जन के लिये विश्राम की आवश्यकता होती है, ठीक वैसे ही 'मन' को अपनी थकी हुई शक्तियाँ पुनः संचित करने के लिये एकान्त की जरूरत होती है, जिसमें रहकर व्यक्ति ज्ञानार्जन, पवित्र विचार, चिंतन–मनन, अध्याय, साधना–उपासनादि के द्वारा पुनः मानसिक शक्तियाँ अर्जित कर लेता है।

एकान्त में, ऐसा जादू है, जिसमें 'मन' का आत्मनिरीक्षण भली प्रकार हो सकता है और जीवन की कठिनाईयों व प्रलोभनों का सामना करने की शक्ति उन्हें परास्त करने का ज्ञान, विचारशक्ति एवं शुकून प्राप्त करता है, जो धर्म चक्षुओं से दिखाई नहीं देती। प्रतिभा और महानता, सुज्ञान से पल्लवित व पुष्पित 'मन और तन' से ही मिलती है। मन को स्वयं समझने व विभिन्न विषयों पर चिंतन–मनन करने से ही मानसिक शक्तियों को सहेजा जा सकता है, तभी लक्ष्यों को दिशा मिलती है। जिसके सम्बल पर व्यक्ति राष्ट्र, समाज और व्यक्तिगत जीवन में, अभीष्ठ को सिद्ध कर लेता है और सम्पन्न सफलताओं के शीर्ष पर पहुँच जाता है।

इस तरह उच्च व 'प्रवीण मन' ही संसार की सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति है। स्वस्थ व सुलझे हुए 'मन' का मानव ही, स्वस्थ शरीर का स्वामी होता है। अतः आनन्दमय, सुखी जीवन की प्राप्ति के लिये 'आत्मविश्वास' का होना भी अत्यन्त आवश्यक है। 'मन' में स्थायित्व लाने के लिये व्यक्ति को मोह त्याग के साथ–साथ अपनी क्षमताओं का भी सम्मान करना होगा और सदैव यह जिज्ञासा रखनी होगी कि हमारे अंर्तमन में क्या है? मन को चंचल व अस्थिर पदार्थो से पृथक रखकर, अडिग स्थिति प्रदान करनी होगी ताकि शारीरिक शक्तियाँ भी ओजस्वी, स्फूर्तियुक्त, सुरक्षित व आनन्द से परिपूर्ण हों।

संसार में, प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का स्थायी स्वरूप उसकी आत्मा में निहित होता है। आवश्यकता है, उसके वास्तविक स्वरूप को पहचानने की और अपने मन रूपी रथ की रस्सियों को दृढ़ता से थाने रहने की, विवेक को निर्मल रखने व इच्छा शक्तियों, क्लेश, आलस्य व व्यसनों एवं संकुचित विचारधारा पर नियन्त्रण रखने की। परिणामतः मानसिक क्षमताएँ शक्तिशाली होंगी और अंर्तमन की चिरज्योति से प्रकाशित हो जायेगा। फलतः व्यक्ति निर्भीक, साहसी, संतोषी, नयी व विश्वास से भरे हुये व्यक्तित्व का स्वामी बनेगा।

यर्थाथ रूप में, यदि व्यक्ति शान्त, सहज व निर्मोही 'मन' एवं प्रफुल्लित मन के साथ समस्त सांसारिक विषय वस्तु को सकारात्मक रूप में देखें, तो उसके हृदय से घृणा, निन्दा, अहंकार और पूर्वाग्रह की प्रवृत्तियाँ धुल जाती है और वह पवित्रता, प्रेम, करूणा, सज्जनता, धैर्य, विनय एवं निस्वार्थ ज्ञान के प्रकाश को अपने अंर्तमन में स्वतः ही आत्मसात कर लेता है। फलस्वरूप, वह मानसिक पूर्णता के साथ क्रियाशील होकर शीर्ष तक पहुँचता है और 'विजयश्री

स्वरूप', विस्तृत, मौन एवं असीम स्तभमण्डल उसके मस्तक पर विराजित हो जाता है।

निम्नलिखित पंक्तियाँ, जीवन को प्रतिष्ठित व सुजीवन बनाने के लिये मन में, तन में, उत्साह एवं उमंग की धारा प्रवाहित कर देती हैं।

"ओ मेरे मन, तू सुकार्य के लिये जाग,

तू ऊँचाई पर जाने के लिये आतुर हो,

तू जीवन पथ का गीत नये स्वर में गा,

तू अपने संशय, चिंता, दुःखों में से,

एक उल्लास और आनन्द की तान निकाल,

तू पथ के कंटकों से खुशी का मुकुट स्व डाल,

ओ मेरे मन बन सबल, मधुर स्वर से गा।

निष्कर्षतः हमें संकल्पित मन और स्वस्थ तन के साथ जीवन पथ में, आने वाले प्रत्येक कर्तव्य को दृढ़ता, लगन व निस्वार्थ भाव से पूरा करना चाहिये। यद्यपि उत्तरदायित्व का बोझ भारी होगा, लेकिन श्रद्धान्वत व अटल इरादों से की गई कर्म साधना ही, सच्ची आराधना है, सिद्धिदा है, जो श्रेष्ठ सफलताओं का मार्ग प्रशस्त करती है। जिस तरह सविता के उदय होने पर सर्वत्र प्रकाश और प्राण जाग्रत हो जाता है, ठीक उसी प्रकार पवित्र व सशक्त मन में दिव्य ज्ञान और तन में दिव्य प्राणों का उदय होता है। परिणामस्वरूप मनुष्य 'सबल मन से स्वस्थ तन' और अतुलनीय मानसिक क्षमताओं का धनी बनकर, नित्यप्रतिदिन नवकल्पनाओं के साथ, दिव्य ज्ञान का आलोक, कर्म का कौशल, वाणी का मार्धुय

और व्यवहार का सौरभ चहुँ ओर सुरक्षित करके, निरन्तर अपने देश, समाज और परिवार को प्रगति के पथ पर अग्रेसित करता रहेगा।

।।इति।।

लेखिका :–
श्रीमती बीना माहेश्वरी
'श्री निकुंज' मनमोहननगर
जबलपुर, म.प्र.